शिक्षा के क्षेत्र में युवा अति सक्रियता

मनीराम*

मानव द्वारा आदिकाल से ही ज्ञान का संचय किया जाता रहा है प्रत्येक नयी पीढ़ी को पुरानी पीढ़ी द्वारा कुछ ज्ञान सामाजिक विरासत में प्राप्त होता है और कुछ वह स्वयं अर्जित करता है मानव की प्रत्येक पीढ़ी में सीखने की प्रक्रिया और हस्तान्तरण द्वारा ज्ञान की वृद्धि होती गयी। ज्ञान की यह परम्परागत श्रृंखला ही शिक्षा है जिसके द्वारा मानव ने अपनी मानसिक, आध्यात्मिक और सामाजिक प्रगति की है शिक्षा ने ही मानव को पशु–स्तर से उँचा उठाया है और श्रेष्ठ सांस्कृतिक प्राणी बनाया है शिक्षा की अवस्थाएं किसी देश के विकास की स्थिति को प्रकट करती है एक देश में अशिक्षित एवं अज्ञानी लोगों की संख्या के आधार पर ही उसके विकसित या अविकसित अवस्था का ज्ञान किया जा सकता है शिक्षा के अभाव में ज्ञान और विद्वान दोनों का अभाव होगा शिक्षा को परिभाषित करते हुए दुर्खीम लिखते हैं शिक्षा अधिक आयु के लोगों द्वारा ऐसे लोगों के प्रति की जाने वाली क्रिया है जो अभी सामाजिक जीवन में प्रवेश करने के योग्य नहीं है इसका उद्देश्य शिशु में उन भौतिक, बौद्धिक और नैतिक विशेषताओं का विकास करना है जो उसके लिए सम्पूर्ण समाज और पर्यावरण करने के लिए आवश्यक है।

शिक्षा का इतना ऊंचा किन्तु सीमित आदर्श लक्ष्य होते हुए भी जीवन मूल्यों में बदलाव के कारण स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् देश में आर्थिक विकास के साथ ही शिक्षा में तेजी से प्रसार हुआ है। शिक्षा संस्थाओं एवं छात्रों की संख्या में पर्याप्त वृद्धि हुई है सुनियोजित शिक्षा योजना के अभाव में गति 24–25 वर्षो में शिक्षित लोगों की संख्या तो अवश्य बढ़ी है किन्तु उसी अनुपात में बेरोजगारी की समस्या भी उग्र रूप धारण कर चुकी है। छात्रों की संख्या वृद्धि के कारण विश्वविद्यालयों में अधिकारियों की इच्छा के विरूद्ध प्रवेश की संख्या में वृद्धि की मांग क्रमशः बढ़ती जा रही है अधिकारियों के सम्मुख यह समस्या प्रतिवर्ष खड़ी होती है।

आज काफी संख्या में विद्यार्थी उच्च शिक्षा ग्रहण करने की प्रतिभा के अभाव में भी इसलिए विश्वविद्यलयों में प्रवेश के लिए दौड़ रहे है कि उनके सामने कोई विकल्प नहीं है इस विवशता में ऐसा सोचना कि उच्च–शिक्षा उनके भविष्य को उज्जवल और सुखद बनायेगी स्वाभाविक है। प्रवेश पाने के बाद ऐसे ही युवा–छात्र रूचि एवं प्रतिभा के आभाव में शिक्षणेतर क्रिया–कलापों में मन लगाते है, और प्रदर्शन में आगे–आगे चलते हैं विश्वविद्यालयों में छात्रों की संख्याधिक्य के कारण शिक्षक उनकी उचित देख–रेख करने में असमर्थ हैं। मार्ग दर्शन एवं देख–रेख के अभाव में युवा अपने प्रधान लक्ष्य से विचलित हो जाता है और हड़ताल तथा प्रदर्शन करने में संकोच नहीं करता। हमारे महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों का रूप और आकार विकसित देश जैसे, अमेरिका, जर्मनी आदि के महाविद्यालयों के तरह होता जा रहा है। भवनों की संख्या और आकार–प्रकार में वृद्धि और प्रांगण की चहल–पहल देखकर कारखानो का आभास हो रहा है इनकी कार्य –विधि यांत्रिक हो गयी है। जबकि शिक्षा एक मानवीय क्रिया है आज विश्वविद्यालय शिक्षा निष्प्राण –एकांगी और केवल बौद्धिक विलास हो गयी हैं इसका सम्बन्ध वर्तमान जीवन –मूल्यों एवं सामाजिक मान्यताओं से नही रह गया है और न तो यह सृजनात्मक ही है। सच तो यह है कि आज की उच्च –शिक्षा एक बौद्धिक अभ्यास मात्र रह गयी है आज का विद्यार्थी नहीं परीक्षार्थी है और उसे, ज्ञान की नहीं कोरी उपाधि की अपेक्षा है।

शिक्षा का कार्य परीक्षा उत्तीर्ण कराना नहीं है वरन् व्यक्तित्व की विशेष सम्भावनाओं को इस प्रकार विकसित होने में सहयोग देना है कि व्यक्तित्व अपने चरम–सीमा को प्राप्त कर सके। नैतिक विकास के लिए सामाजिक सम्बन्धों का निर्वाह स्व– उन्नयन के लिए साधना संयम एवं चित्तवृत्ति–निरोध बौद्विक–विकास के लिए ज्ञानार्जन तथा उसका प्रसारण सुन्दर जीवन –यापन के लिए कार्य– कौशल, व्यवसायिक दक्षता तथा सौन्दर्य बोध के लिए प्रकृति का साहचर्य, साहित्य संगीत, कला आदि को सुलभ करना ही शिक्षा का कार्य है।

संयोगवश यदि कभी विश्वविद्यालय में नये मुद्दे आ जाते हैं जो जटिल और विवादास्पद है तो उसके समाधान में न्यायिक दृष्टिकोण न अपनाकर सुविधावादी हल निकाल लिया जाता है। फलस्वरूप नियम का

* शोध–छात्र, समाजशास्त्र विभाग तिलकधारी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जौनपुर (उ0प्र0)

उल्लंघन होता है तथा समाहित होने की अपेक्षा और भी उलझती है। यह प्रशासकों की कमजोरी का परिचायक है साथ ही इससे दृढ़ता कल्पनायुक्त और प्रशासनिक सूझ–बूझ की कमी भी झलकती है।

ऐसे तरूण प्राध्यापकों मे जिनका विगत सात–आठ वर्षो से विश्वविद्यालय या महाविद्यालय में आगमन हुआ है, अध्यापकोचित शालीनता का अभाव एवं युवकोंचित वृत्ति तथा व्यवहार देखे जा सकते है। वे नये फैशन या वेश–भूषा का अनुकरण शीघ्रता से अपने पद की मर्यादा को भुलाकर करते हैं। सुखवादी आचरण का आभास समय –समय पर देते रहते है। कठिन का त्याग और सुविधा का संग्रह उनकी प्रवृत्ति होती जा रही है, जो कि शिक्षा के मूल्य मन्तव्य के प्रति कूल है। न तो उनमें प्राचीन काल के अध्यापकों की साधना, तपस्या या पूर्ण समर्पित लगन है और न आधुनिक काल की अभीष्ट अध्यवसायिक चेतना ही। उनमे छात्रों के स्थायी और व्यापकहित में जो रागात्मक तन्मयता होनी चाहिए उसका भी अभाव है। प्राध्यापक विश्वविद्यालय –परिवार का एक सदस्य न मान कर अपने केा वेतन –भोगी कर्मचारी समझता है। भौतिकता से ही परिचालिता इस वर्तमान समाज में अध्यापक का वह सम्मान नहीं रहा जिसका वह अधिकारी है। इसका कारण यह है कि सम्पन्न नहीं है और स्वतः भी अपने को हीन समझने लगा है। वह साधनहीनता की बात करता है जो उसके लिए शोभा नहीं देती।

शिक्षा प्रशासन का पुराना नौकरशाही ढांचा ही शिक्षा में व्याप्त अनेक समस्याओं की जड़ है। भारतीय शिक्षा के इतिहास से स्पष्ट है कि साम्राज्यवादी वातावरण में भारतीय विश्वविद्यालयों का जन्म व्यवस्था तथा प्रगति हुई है 1904 के रैले कमीशन की सिफारिश के अनुसार एक कानून पास हुआ जिसके फलस्वरूप विश्वविद्यालय का स्वायत्व घटा और प्रशासन तंत्र का प्रभाव बढ़ गया है। भारत के प्रबुद्ध वर्ग ने इसका विरोध किया सरकार को यह आशंका हो चुकी थी कि विश्वविद्यालयी शिक्षा प्राप्त युवकों में राजनैतिक चेतना और विद्रोह की भावना बढ़ रही है। इस चेतना के दमन के लिए उपयुक्त कानून बनाया गया था। इस व्यवस्था के अन्तर्गत स्थापित इन विश्वविद्यालयों की प्रत्येक गति–विधि जैसे परीक्षा, प्रतिस्पर्धा आज्ञाकारिता, विनयशीलता, पारम्परिक पाठ्यक्र, गत्यात्मकता अभाव शिक्षण एवं प्रशासनिक अधिकारियों का वर्गीगरण निश्चित नियम, शिक्षण तथा सीखने की प्रक्रिया में अधिनायकवादी दृष्टिकोण दण्ड और पुरस्कार, प्रयोग और सृजन के लिए अल्प अवसर आदि में साम्राज्यवाद के स्वार्थ तथा नौकरशाही की गन्ध मिलती है।

हमारे देश के विश्वविद्यालय अथवा महाविद्यालय ब्रिटिश विश्वविद्यालयों के प्रतिमान पर संगठित किये गये है अतः इनका प्रारम्भिक प्रयोजन ही समाज के उच्च वर्ग को शिक्षा उपलब्ध कराना था जिस समय इन विश्वविद्यालयों का संगठन किया गया उस समय की स्थितियों से आज की स्थितियाँ पर्याप्त भिन्न है। आज एक समाजवादी समाज का निर्माण, सामाजिक न्याय क्षमता तथा धर्मनिरपेक्षता के आधार पर किया जा रहा है। तकनिकीकरण और औद्योगीकरण समाज की व्यवस्थाओं को बड़ी शीघ्रता से बदल रहे है। समाज अनेक दृष्टियों से बहुत आगे बढ़ गया है। किन्तु हमारी शैक्षिक संस्थाएं मुख्यतया विश्वविद्यालय अपने उसी पुराने ढांचे व्यवस्था पद्धति तथा कार्यक्रम को बनाये हुए है। जिनको उन्होंने आज सौ वर्षो पूर्व अपनाया था। अतः वे समाज के साथ नहीं है। वे भूल गये है कि शिक्षा का लक्ष्य सामाजिक परिवर्तन के साथ सामंजस्य रखना है।

छात्र –असन्तोष के अनेक कारणों में से प्रचलित परीक्षा प्रणाली भी एक है यह छात्रों की प्रतिभा या सृजनात्मक शक्ति का आंकलन न कर उनके उस स्मरणशक्ति की जांच करती है जो अपने भाषाई क्षमता के माध्यम से प्रकट करती है। प्रतिभासम्पन्न छात्रों की खोजों में वर्तमान परीक्षा प्रणाली अधिकांश छात्रों में हीन भावना के बीज बोती है श्रेणियों का विभाजन कभी वैज्ञानिक सिद्ध नहीं किया जा सकता तृतीय श्रेणी पाने वाले छात्रों को उच्चतर कार्यो के लिए प्रायः अयोग्य घोषित कर दिया जाता है। क्या यहां यह कहना उचित नहीं होगा कि वर्तमान परीक्षा –प्रणाली ने ही बहुसंख्यक छात्रों में कुण्ठा, हीनता, नैराश्य आदि को जन्म दिया है।

आज देश के हजारों–लाखों युवकों मे असन्तोष एंव आक्रोश पाया जाता है सक्रियता दिखायी पड़ती है वे आज कई प्रकार के तनावों से ग्रसित हैं युवकों में पाया जाना वाला तनाव एवं असन्तोष कई रूप में प्रकट होता है कई युवक प्रदर्शनों तोड़–फोड़ आगजनी, मारपीट, हड़तालों, घेराव एवं हिंसात्मक दंगों में भाग लेते है कभी–कभी कॉलेज या विश्वविद्यालय में हिंसा की अग्नि भड़क उठती है और युवावर्ग कभी भाषा के नाम पर आन्दोलन करते हैं तो कभी शिक्षाप्रणाली में परिवर्तन के नाम पर तो कभी छात्र आक्रोश प्रशासन या व्यवस्था के विरूद्व भड़क उठता है और कभी मंहगाई, आरक्षण या भ्रष्टाचार के विरूद्ध आन्दोलन के रूप में। युवा अतिसक्रियता या असंतोष अक्सर विद्यार्थी अनुशासनहीनता के रूप में प्रकट होता है उप–कुलपतियों का

समय–समय पर घेराव करते है युवकों में अति सक्रियता या असंतोष का प्रमुख कारण उनका मौजूदा व्यवस्था से असन्तुष्ट होना है। आज का छात्र न तो सुगमता से अपनी आकांक्षाओं को और न ही माता–पिता की अपेक्षाओं को पूर्ण कर पाता है वह जीवन में कई स्वप्न संजोता है पर यथार्थ के धारातल पर उन्हें टूटते हुए देखता है यह सारी परिस्थिति उसमें असन्तोष बढ़ाने योग देती है। सार्वजनिक जीवन में व्याप्त भ्रष्टाचार भी छात्रों को व्यवस्था के विरूद्ध उठ खड़े होने को बाध्य कर देता है आज युवकों में तरूणाई का तूफान अवश्य है, जोश है कुछ कर गुजरने की लालसा है परन्तु उनमें से अधिकांश दिशाहीन प्रतीत होते हैं।

वर्तमान में संसार के अनेक देशों में युवा तनाव, छात्र असंतोष, देखने को मिलता है। वर्तमान में भारत में युवा अतिसक्रीयता अनेक प्रकार की निराशाओं, आन्दोलन, तोड़–फोड़ घेराव आदि युवा अति सक्रियता या छात्र असंतोष की ही अभिव्यक्तियाँ है। युवा वर्ग भ्रान्त तर्को के नाम उचित सिद्ध करने का प्रयास करता है। युवा असंतोष को अनुशासनहीनता, नियमहीनता, तोड़–फोड़ आगजनी और पथराव तक को उचित माना जाता है इस रूप में युवा असन्तोष एक समुदायिक समस्या है।

युवा अति सक्रियता की समस्या आज इतनी बढ़ चुकी है कि लग–भग सभी विश्वविद्यालयों तथा कॉलेजों के परिसर अशान्ति और अनुशासनहीनता के केन्द्र बन चुके है। विद्यर्थियों द्वारा अक्सर हड़ताले, और घेराव करना अनुचित माँगों को लेकर प्रदर्शन करना, नियमों को भंग करते हुए अनुशासनप्रिय शिक्षकों का अपमान करना, परीक्षा में नकल करने के लिए तरह–तरह के उपद्रव करना तथा आवश्यकता पड़ने पर हिंसा पर उतारू हो जाना दीक्षान्त समारोहो की पवित्रता नष्ट करना, समय–समय पर विरोध के रूप में शिक्षा संस्थाओं के सम्पत्ति तोड़ना या उसमें आग लगा देना आदि।

आज शायद ही कोई ऐसा विश्वविद्यालय महाविद्यालय बचा हो जहां किसी शैक्षणिक सत्र में प्रदर्शन, हड़ताल, तोड़–फोड़ घेराव, मारपीट, या आगजनी नहीं होती हो। छोटी–मोटी बातों को लेकर विद्यार्थी आये दिन हड़ताल करता है अध्यापकों, प्राचार्यो, उपकुलपतियों एवं प्रशासकों के विरूद्ध नारे लगता है और यदाकदा घेराव, और मारपीट तक का सहारा लेता है।

शिक्षा में वर्तमान सामाजिक मूल्यों तथा परिवर्तशील विशेषताओं का आभाव होने के कारण यह न तो उपयोगी प्रतीत होती है और न विद्यार्थी वर्ग इसमें कोई रूचि ही महसूस करता है इस शिक्षा में युवा वर्ग की अकांक्षाओं तथा रूचियों का कोई समावेश न होने के कारण इसका आन्तरीकरण करना बिल्कुल भी आवश्यक नहीं समझा जाता हमारे यहाँ शिक्षा का विस्तार तो बहुत तेजी से हुआ लेकिन कारखानों, कार्यालयों तथा औद्योगिक प्रतिष्ठानों में रोजगार के अवसर उस अनुपात में नहीं बढ़ा सके। आरम्भ चिकित्सा, इन्जीनियरिंग तथा दस्तकारी की शिक्षा आर्थिक क्षेत्रों में उपयोगी बने रहने के कारण विद्यार्थियों को अनुशासित बनाये रही लेकिन हमारी दोषपूर्ण नीतियों के कारण अब ऐसी शिक्षण संस्थाएं भी तनाव और आन्दोलनों का केन्द्र बन चुकी है।

शिक्षण संस्थाओं में पुस्तकालयों एंव प्रयोगशालाओं की अपर्याप्त सुविधा, अध्यापकों का अभाव, वांछित विषयों का न होना, छात्रावास की कमी, वहां खाने–पीने व रहने की व्यवस्था की कमी खेल–कूद की सुविधाओं का आभाव, कैण्टीन की उचित सुविधा का न होना, आदि भी छात्रों में असन्तोष पैदा करता है, और वे इन सुविधाओं के प्राप्त करने के लिए आन्दोलन का सहारा लेते हैं तथा परीक्षा प्रणाली होने वाले परिवर्तन तथा पास होने के नियमों में हेर–फेर आदि भी छात्र असन्तोष के लिए उत्तरदायी हैं। परीक्षाओं का समय पर न होना या उनकी तिथियां आगे बढ़ाने, अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दी माध्यम द्वारा पढ़ाने, पूरक परीक्षा एवं उत्तीर्ण होने के नियमों को उदार बनाने, बिना परीक्षा दिये उत्तीर्ण होने एवं सामूहिक नकल तक के लिए युवा छात्र ने आन्दोलन किये है।

आज छात्र एवं अध्यापकों के बीच सम्बन्ध नहीं रहे हैं छात्रों की संख्या बढ़ जाने के कारण यह सम्भव नहीं है कि अध्यापक प्रत्येक छात्र से आत्मीय एंव घनिष्ट सम्बन्ध बना सके उसके समस्याओं को जानकर उन्हें हल करने के लिए प्रयास कर सके। छात्र–शिक्षक अनुपात बढ़ जाने के कारण अध्यापकों का छात्र पर नियंत्रण सिथिल हुआ है पहले उद्दण्ड छात्र को कॉलेज से निकाल दिया जाता था शरारती छात्र को डॉट – फटकार या कक्षा से बाहर कर दिया जाता था। कर्तव्यनिष्ठ छात्रों को उसके साथियों एवं अध्यापकों द्वारा आदर दिया जाता था, अध्यापकों का अध्यापन प्रेरणादायक होता था और कक्षा में उपस्थित होना छात्र अपने लिए लाभदायक समझते थे। प्राध्यापक पूर्ण कुशल होते थे और उन्हें विद्वता के कारण काफी सम्मान मिलता था। उस समय कोई भी विद्यार्थी अपने शिक्षकों की दृष्टि में नीचे नहीं गिरना चाहता था किन्तु आज के विद्यार्थियों में अपने शिक्षकों

प्रति आदर–भाव नहीं पाया जाता जो किसी समय पाया जाता था। अतः वे अध्यापकों की अच्छी राय की परवाह नहीं करते, कठिन परिश्रम और क्षैक्षिक उपलब्धि का विद्यार्थियों की दृष्टि में विशेष महत्व नहीं पाया जाता वर्तमान में युवा छात्रों के नैतिक मूल्यों का ह्रास हुआ है प्राचीन मूल्य बदल रहे हैं जिन्होंने असन्तोष को बढ़ावा दिया है।

हमारे विश्वविद्यालय अपने उसी पुराने ढ़ाँचे, व्यवस्था तथा कार्यक्रम को बनाये हुए हैं जिनको उन्होनें आज से 100 वर्ष पहले अपनाया था वे समाज के साथ बिल्कुल नहीं बदले हैं प्राचीन समय उपेक्षित वंचित वर्ग के लिए आज उच्च शिक्षा उपलब्ध है शिक्षा–प्राप्ति का प्रबन्ध जैसे–तैसे हो जाता हैं किन्तु इस वर्ग के छात्र उच्चवर्गीय साधन–सम्पन्न परिवारों से आये हुए छात्रों के समान वेश–भूषा, खान–पान, आधुनिक फैशन की वस्तुएं तथा मनोरंजन के अवसर प्राप्त नहीं कर पाते। इससे उसके मन में असंतोष, स्पर्धा, ईर्ष्या के साथ ही हीनता की भावना भी उत्पन्न हो जाती है।

सन्दर्भ :

1– हुसैन, तैयब (2007): शिक्षा परिदृश्य, शिक्षा विमर्श, नवम्बर–दिसम्बर पृ0 39.
2– फीलिप्स, बी0एस, सोशियोलॉजी, सोशल स्ट्रक्चर एण्ड चेन्ज पृ0 305.
3– श्रीमद्भगवत गीता– अध्याय 4, श्लोक 33–38
4– भावे, विनोबा (1960) : शिक्षण विचार अखिल भारत सर्वसेवा संघ प्रकाशन काशी, पृ0 293–298.
5– भटनागर, सुरेश : आधुनिक भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएँ, पृ0 37
6– धर्मवीर (2008) राजनैतिक, समाजशास्त्र, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, पृ0 62–64